बुद्धवर्ष २५४४, आषाढ़ पूर्णिमा, १६ जुलाई, २००० वर्ष ३० अंक १

धम्मवाणी

सुञ्ञागारं पविट्ठस्स, सन्तचित्तस्स भिक्खुनो।
अमानुसी रति होति, सम्मा धम्मं विपस्सतो॥

– धम्मपद ३७३

किसी शून्यागार में प्रवेश करके कोई शांत-चित्त साधक जब सम्यक रूप से धर्मानुपश्यना करता है तब उसे लोकोत्तर सुख प्राप्त होता है (जो कि सामान्य मानवीय लोकीय सुखों से परे होता है)।

[धारण करे तो धर्म]

स्वानुभूति आवश्यक है।

(जी-टीवी पर क्रमशः चौवालीस कड़ियों में प्रसारित पूज्य गुरुदेव के प्रवचनों की **चौदहवीं कड़ी**)

बुद्धि के स्तर पर समझे हुए ज्ञान में और अनुभूति के स्तर पर जाने हुए ज्ञान में बहुत बड़ा अंतर होता है। दोनों के प्रभाव में बहुत बड़ा अंतर होता है। दुनिया की बाहरी सच्चाइयों को हम अपनी बुद्धि के स्तर पर समझ सकते हैं। परंतु सत्य को यदि अनुभूति पर उतारना है तो अपनी साढ़े तीन हाथ की काया के भीतर ही उतारना होता है। भारत की पुरातन भाषा में उसी को अध्यात्म कहते थे। अपने मानस को जड़ों तक सुधारना हो, विकारों को जड़ों से निकालना हो तो भीतर की सच्चाई अनुभूति के स्तर पर जाननी ही होगी। मानस को बाहर-बाहर की घटनाएं देख करके सुधारें तो सुधार तो होता है, परंतु वह ऊपर-ऊपर से बौद्धिक स्तर पर होता है। गहराइयों तक उसका असर नहीं होता। बाहर की घटना को देख करके कभी कोई भावावेश जागता है और मन में बड़ी विरक्ति जागती है, बड़ा ज्ञान जागता है पर उसका गहराइयों तक कोई असर नहीं होता। इसलिए मन का कोई स्थायी सुधार होने का काम नहीं होता।

बुद्धि के स्तर पर तो सभी जानते हैं, समझते हैं कि यह सारा संसार अनित्य है। सजीव हो, निर्जीव हो; सभी उत्पन्न होते हैं, नष्ट हो जाते हैं। लोग जन्मते हैं, मर जाते हैं। हर प्राणी जन्मता है, मर जाता है। कितना भंगुर है, कितना नश्वर है, इत्यादि-इत्यादि। एक उदाहरण से समझें। मानो कि सीका कोई बहुत प्यारा गुजर गया। अब उसके शव को लेकर के श्मशान घाट पर गये। चिता पर उसका शव रखा। आग लगायी। चिता जल रही है और वह बैठ करके चिंतन कर रहा है –अरे, यह कैसा जीवन है? जीवन की यही अंतिम परिणति है? हर व्यक्ति जो जन्मेगा, इसी प्रकार मृत्यु को प्राप्त हो जायगा? मैं भी इसी प्रकार मृत्यु को प्राप्त हो जाऊंगा? जैसे आज इसके शरीर को लाकर यहां जला दिया गया, वैसे मेरे शरीर को भी यहां ला करके जला दिया जायगा? जैसे यह अपने साथ कुछ नहीं ले गया। अरे, हाय-हाय, हाय-हाय करके इतना धन बटोरा, सब यहीं रह गया। खाली हाथ चला गया। मेरी भी यही दशा होने वाली है? यह पत्नी, यह पुत्र, यह भाई, यह बंधु, यह महल, ये गाड़ियां सब धरे रह जायेंगे? बड़ा विराग जागा, बड़ा ज्ञान जागा। पर कितनी देर? श्मशान भूमि से दो कदम बाहर आते ही सारी बातें भूल गयीं। फिर वही 'मैं-मैं', 'मेरा-मेरा'। इतने में सामने कोई आदमी दिख गया, जो उसका दुश्मन है। ओ, इस पर क्रिमिनल केस करना है। अब तक सिविल केस कर रहे थे। इतने से बात नहीं बनती, इसको ऐसे फँसायें कि इस पर क्रिमिनल केस करें। क्या हो गया? वह सारा ज्ञान कहां गया? अरे, श्मशान-ज्ञान है भाई, थोड़ी देर बुद्धि पर असर होता है, अंतर्मन की गहराइयों तक उसकी पहुँच नहीं होती। हो ही नहीं सकती।

एक और उदाहरण से समझें। कोई व्यक्ति एक धर्म सभा में गया। धर्म-प्रवचन हो रहा है। धर्म की बात बड़ी अच्छी लगी। अरे, यह इतना राग, इतना द्वेष, कैसा जीवन जी रहे हैं? कितनी आसक्ति? इसके प्रति आसक्ति, उसके प्रति आसक्ति। इस वस्तु के प्रति आसक्ति, उस व्यक्ति के प्रति आसक्ति। उस सत्ता के प्रति आसक्ति, उस पद, उस सम्मान के प्रति आसक्ति। अरे, कैसा जीवन है? व्याकुलता ही व्याकुलता है। धर्म की बात खूब समझ में आयी। सोचने लगा हमें भी अनासक्त होना चाहिए, वीतराग होना चाहिए। बस, अब तो अपने जीवन को बदल कर छोड़ूंगा। जिस आसक्ति के मारे इतना दुखियारा रहता था वह अब मुझे दुखियारा नहीं बना सकती, क्योंकि आसक्ति को निकाल बाहर करूंगा। यह सारा राग दूर करूंगा। यों धर्म का बड़ा ज्ञान उपजा। और जब उस हॉल के बाहर आया तो देखता है, उसका जूता नहीं है। अरे, कोई उठा कर ले गया। हाय रे, मेरा जूता कहां गया रे! अरे, कल ही खरीदा था रे, बड़ा कीमती जूता था रे, कौन ले गया रे, क्या हो गया रे! तेरी अनासक्ति कहां गयी भाई? आसक्ति ही आसक्ति है ना! राग ही राग है ना! यह ऊपरी-ऊपरी बौद्धिक ज्ञान उन गहराइयों तक जा नहीं पाता। इसका अपना लाभ है क्योंकि यह ऊपरी-ऊपरी ज्ञान भी सुनते रहेंगे तो अतियों में जाने से बचेंगे। कम से कम मन में एक भाव तो जागेगा कि यह ज्ञान मुझको भीतर तक पहुँचाना है। हो सकता है, कभी यह विद्या सीखने के लिए आ जाय कि यह ज्ञान मुझे भीतर तक पहुँचाना है, वहां जहां राग जागता है, उसका उद्गम होता है। जहां आसक्ति जागती है, उसका उद्गम होता है, वहां पहुँच कर उसे दूर करना होगा ना! ऊपर-ऊपर से यदि केवल पेड़ को सुधारते रहें तो बात नहीं बनती। क्योंकि उसकी जड़ें बीमार हैं, रोगी हैं। जड़ों को सुधारे बिना केवल ऊपर-ऊपर से सुधारने का काम करेंगे तो एक बार तो लगेगा कि

पेड़ सुधरने लगा। जो बीमार डालें थीं, उन्हें काटदिया। पत्ते काटदिये। पेड़ अच्छा दीखने लगा लेकिन कीड़ेतो नीचे जड़ों में लगे हैं।

इसी प्रकार मानस की गहराइयों में जो रोग लगा हुआ है, जब तक वह दूर नहीं होगा, हमारा कल्याण नहीं हो सकता। संसार की ऐसी अनेक बातें हैं जिनको अनुभूति से ही जानें, यह आवश्यक नहीं। एक काला नाग है। कोई कहे कि यह काट लेगा तो आदमी मर जायगा। इसके दांत में विष होता है और काटते ही यह अपने दांत से विष छोड़ देता है। यह विष शरीर में जाकर आदमी की मृत्यु का कारण हो जाता है। किसी में यह बावलापन आये कि नहीं, मैं नहीं मानता। जब तक यह काला नाग मुझे काट न ले और जब तक मैं मृत्यु को प्राप्त न हो जाऊं, मैं नहीं मानता इस बात को। अरे, तो पागलपन हो जाएगा न! बाहर की दुनियादारी की बातों को बुद्धि के स्तर पर मान लेना समझदारी है। लेकिन जिसे अध्यात्म का काम करना है, अपने मानस को सुधारने का काम करना है वह केवल ऊपरी-ऊपरी ज्ञान से करना चाहे तो होता नहीं। उसे स्वयं अंतर्मुखी होकर के, काया में स्थित होकर के, कायस्थ होकर के भीतर क्या हो रहा है? यह सारा कायाप्रपंच, यह सारा चित्तप्रपंच किस प्रकार काम कर रहा है? इन दोनों के संसर्ग से कैसे विकारों की उत्पत्ति होती है? संवर्धन होता है? यह सारा अनुभूतियों से जानना है, तभी इसके बाहर निकल पायेगा।

कोई भी व्यक्ति सम्यक संबुद्ध होता है, अरहंत होता है, जीवन्मुक्त होता है; सचमुच वीतराग, वीतद्वेष, वीतमोह होता है तो उसे अपने विकारों को जड़ों से ही निकालना होता है। ऊपरी ज्ञान से कोई व्यक्ति बुद्ध नहीं बन सकता, अरहंत नहीं बन सकता। वीतराग, वीतद्वेष, वीतमोह नहीं बन सकता। अंतर्मुखी होना ही होता है। अंतर्मुखी होता है तो पहले सांस से काम शुरू करता है। शुद्ध सांस, जैसा है वैसा है। निरीक्षण करने की विद्या सीख रहा है ना! साक्षीभाव से जानने की विद्या सीख रहा है तो यथार्थ को देखेगा, तभी सही माने में, सही निरीक्षण कर सकेगा। कृत्रिम बात को देखने लगा तो परम सत्य तक कैसे पहुँचेगा? सत्य के सहारे-सहारे चलेगा तो जो सत्य प्रकट हुआ, उसे साक्षीभाव से जान लिया। जो सत्य प्रकट हुआ, साक्षीभाव से जान लिया। क्योंकि भीतर जो कुछ हो रहा है वह कृत्रिम नहीं है, स्वभावतः हो रहा है। जो निसर्गतः हो रहा है उसको जानना है। और जो काम ही निसर्गतः हो रहा है, अपने आप हो रहा है – **"आपेआपि निरंजन सोई"**, उस निरंजन को आंखों से नहीं देखना है ना! उसे तो अनुभव करना है।

इसीलिए कहा, **"अंजन मांहि निरंजन देखो"**। क्या देखे? रूप नहीं देखना है। यह रूप तो अंजन है, दिख रहा है ना! यह बाहरी-बाहरी शरीर, जो आंखों से दीखता है, इसी को 'अंजन' कहा। इस "अंजन मांहि निरंजन देखो", उसको अनुभव करना है जिसका रूप नहीं है, आकृति नहीं है। भीतर की सच्चाई को अनुभव करना है। इसी को भारत की पुरानी भाषा में देखना कहते थे, दर्शन कहते थे। अरे, इसी को वेदन कहते थे, पश्यना कहते थे। देखना माने अनुभव करना है और उससे जो ज्ञान जागे, वह सही ज्ञान। इसका अपने यहां बड़ा महत्त्व था। दर्शन ज्ञान, वेद ज्ञान, अनुभव वाला ज्ञान है; पश्यना ज्ञान है। बार-बार पुराने साहित्य में आता है, 'पस्स, जान', 'पस्स, जान'। अनुभव कर और जान। देख, माने रूप देख कर क्या जानेगा? आकृति देख लेगा, रंग देख लेगा, रूप देख लेगा। क्या मिलेगा? अनुभव कर। अपने शरीर और चित्त की होने वाली स्थितियों का अनुभव कर और उनके संघात से उत्पन्न विकारों का अनुभव कर और करते-करते उससे छुटकारा पा। जिसके प्रति इतनी आसक्ति पैदा कर रखी है, उस आसक्ति का अनुभव कर और अनुभव करते-करते उस आसक्ति के बाहर निकल जा। अनुभव कर। हर महापुरुष यही करता है। ऐसा करता है तभी महापुरुष होता है, मुक्त होता है, भवमुक्त होता है। शुद्ध होता है, बुद्ध होता है। सांस के सहारे देखते-देखते अब भीतर चला गया। काया में स्थित हो गया। **"निच्चं कायगतासति"** – काया में जो कुछ हो रहा है, उसके प्रति खूब सजग है। जो हो रहा है, उसे जान रहा है। प्रारंभ में बहुत स्थूल-स्थूल सच्चाइयां प्रकट होती हैं। इस शरीर-स्कंध की स्थूल-स्थूल सच्चाइयां – कहीं भारीपन है, कहीं दबाव है, कहीं दुखाव है। उन्हें साक्षीभाव से देख रहा है। यों साक्षीभाव से देखने की यह जो विद्या है, जो प्रज्ञा है, वह सूक्ष्म हुए जा रही है, तीक्ष्ण हुए जा रही है। उसको उन दिनों की भाषा में बींधती हुई प्रज्ञा कहते थे। जो छेदन करती है, भेदन करती है। सारी स्थूलता का भेदन करते हुए, छेदन करते हुए, उसका विघटन करते हुए, विभाजन करते हुए हमें इस लायक बनाती है कि हम उसका विश्लेषण कर सकें। अनुभूति के स्तर पर विश्लेषण करके जान सकें।

यों स्थूलता से आगे बढ़ते-बढ़ते उस सूक्ष्म अवस्था पर पहुँच जाय जो कि भौतिक जगत का अंतिम सत्य है। विपश्यना इसीलिए की जाती है कि सारे के सारे भौतिक सत्य अपने शरीर के भीतर अनुभूति पर उतार रहे हैं। आगे बढ़ते-बढ़ते उससे सूक्ष्म, फिर उससे सूक्ष्म। धीरे-धीरे वह अवस्था आ पहुँचती है जबकि साधक सारे के सारे शरीर में उस नन्हें से कण तक पहुँच जाता है जिसका अब और विभाजन नहीं हो सकता, उसके टुकड़े नहीं हो सकते। (वह अवस्था कभी भी आये, व्यक्ति-व्यक्ति पर निर्भर करता है। समय लगता है) उसे चाहे अणु कहें, परमाणु कहें। उन दिनों की भाषा में भगवान बुद्ध ने उसके लिए एक नया शब्द गढ़ कर दिया। क्योंकि जो-जो शब्द प्रचलित थे, उन्होंने देखा, वे पूरा भाव व्यक्त नहीं करते। अतः उन्होंने उसे 'अष्ट-कलाप' कहा। कलाप माने समूह। समस्त भौतिक जगत की नन्हीं से नन्हीं इकाई, जिससे नन्हा और कुछ नहीं, फिर भी उसमें आठ बातें सदा जुड़ी रहती हैं – पृथ्वी धातु, अग्नि धातु, वायु धातु, जल धातु, ये चार महाभूत और इन चार महाभूतों में से हरेक के अपने-अपने गुण, धर्म, स्वभाव। ये आठ एक साथ जुड़े रहते हैं इसलिए इसे 'अष्ट-कलाप' कहा। यह भी इतना सूक्ष्म कि आंखों से नहीं देखा जा सकता। लेकिन अनुभव से मालूम होगा। टुकड़े करते-करते जो अनुभूतियां हो रही हैं उनसे मालूम होगा कि ये अष्ट-कलाप भी कोई ठोस पदार्थ नहीं हैं। भौतिक पदार्थ हैं लेकिन ठोस नहीं, बल्कि मात्र तरंगें हैं और इन अष्ट-कलापों के पुंज के पुंज हैं। उनको देख करके कहता है कि अरे, जितनी देर में मैं चुटकी बजाऊं या जितनी देर में पलक झपकूं, उतनी देर में यह नन्हा-सा अष्ट-कलाप अनेक शत-सहस्र कोटिबार उत्पन्न होता है, नष्ट होता है। उत्पन्न होता है, नष्ट होता है। इतनी शीघ्र गति से उत्पन्न-नष्ट, उत्पन्न-नष्ट, उत्पन्न-नष्ट हुए जा रहा है। शत-सहस्र कोटियानी एक के आगे बारह बिंदी लगायें, और वह भी अनेक शत-सहस्र कोटिबार उत्पन्न होकर नष्ट हो जाता है।

पश्चिम जगत के वैज्ञानिकों ने, जिन्होंने बाह्य जगत की खोज की, अनुसंधान किया उन्होंने लगभग सौ वर्ष पहले यह सच्चाई समझ ली कि सारे भौतिक जगत में तरंगों के सिवाय और कुछ नहीं है। कहीं ठोसपना नहीं है, कहीं सघनता नहीं है – यह यथार्थ सत्य है। वास्तविकता यह है कि केवल तरंगें ही तरंगें हैं। भारत का एक महापुरुष अंतर्मुखी होकर के इसी सच्चाई को देख गया और कहता है **"सब्बो पज्जलितो लोको, सब्बो लोको पकम्पितो, पकम्पितो"**, अरे, केवल प्रज्वलन ही प्रज्वलन, केवल प्रकम्पन ही प्रकम्पन है। उत्पन्न होना नष्ट होना, उत्पन्न होना नष्ट होना, यही है और कुछ नहीं? सच्चाई तो वही है।

भारत के लोगों ने अंतर्मुखी होकर के बिना किसी बाह्य उपकरण के इस सच्चाई को जाना और बड़ा कल्याण हुआ उससे। पश्चिम के वैज्ञानिकों की कोई निंदा नहीं है, लेकिन दोनों के अंतर को समझना चाहिए। आज के लगभग पचास वर्ष पहले कैलिफोर्निया की बर्कले युनिवर्सिटी के फीजिक्स विभाग का हेड, वहां का बहुत बड़ा साइंटिस्ट। उसको इस बात की लगन लगी कि यह नन्हा-सा सब-एटोमिक पार्टिकल, जो कि है तो तरंग ही, पर एक सेकेंड में यह तरंग कितनी बार उत्पन्न होती है, नष्ट होती है – इसे जानने की कोशिश करें। आंखों से दीखती नहीं और इतनी शीघ्र गति के साथ उत्पन्न-नष्ट, उत्पन्न-नष्ट हो रही है कि इसे गिना कैसे जाय? अतः अपनी बुद्धि से उसने एक यंत्र बनाया और उसे कहा, "बबल चेंबर"। ठीक ही कहा, बुलबुले ही तो हैं जो उत्पन्न होते हैं, नष्ट होते हैं, उत्पन्न होते हैं, नष्ट होते हैं। उस बबल चेंबर के द्वारा उसने जाना कि यह नन्हा-सा कण, जो वाइब्रेशन ही है, वह एक सेकेंड में एक के आगे बाईस बिंदी लगाएं, इतनी बार उदय-व्यय, उदय-व्यय, उदय-व्यय होता है।

भारत का यह महान वैज्ञानिक भी यही बात कहता है कि जितनी देर में पलक झपकूं कि चुटकी बजाऊं, यह अनेक शत-सहस्र कोटि बार उदय-व्यय होता है। अरे, दोनों ही सच्चाई के पास पहुँच गये फिर भी दोनों में कितना बड़ा अंतर? भारत का यह महान वैज्ञानिक उस सच्चाई पर पहुँच करके शुद्ध हो गया, बुद्ध हो गया, मुक्त हो गया, अनासक्त हो गया और करुणा से भर उठा, मैत्री से भर उठा। लेकिन आज का यह वैज्ञानिक? वैज्ञानिकों की कोई निंदा नहीं है लेकिन यहां इस धर्मगंगा में स्नान करने के लिए हर देश के लोग आते हैं, हर मजहब के लोग आते हैं, हर मान्यता के लोग आते हैं। कैलिफोर्निया के भी कुछ लोग आये और शिविर में बैठे। ये सारी बातें सुनी तो लौट कर, जाकर उस प्रोफेसर से मिले और आकर हमें बताते हैं कि अरे, वह तो बड़ा व्याकुल व्यक्ति है। बहुत तनावों से भरा हुआ, जैसे आम लोग होते हैं, बहुत तनाव है बेचारे में। बहुत व्याकुल है और बड़ा शॉर्ट-टेंपर्ड है। क्योंकि जो पहला एटम बम बना, उसके बनाने में उस व्यक्ति का हाथ था और उसके मन में यह उत्सुकता जाग रही थी कि मेरा बनाया हुआ यह एटम बम जापान पर जब गिरे तो मैं देखूं कि उसका क्या परिणाम होता है? इसलिए जो हवाई जहाज वह एटम बम लेकर के जापान के नगर पर गिराने के लिए गया, उसमें यह भी साथ बैठ कर गया था। देखें, दोनों की मनोवृत्ति में कितना बड़ा अंतर है!

ऐसा क्यों होता है? इसे भी समझें! अंतर्मुखी होकर के अपने बारे में सच्चाई जानने का जो काम है, वह कोई कौतूहल पूरा करने के लिए नहीं है। बाहरी दुनिया में कोई सुख-सुविधा या कोई शक्ति प्राप्त करने के लिए भी नहीं है, जिसका दुरुपयोग या सदुपयोग भी हो सकता है। बल्कि भीतर की अध्यात्म की शक्ति जगाने के लिए, अध्यात्म की ऊर्जा जगाने के लिए काम करते हैं। अंदर की सच्चाई की अनुभूति का काम शुरू करते हैं। स्थूल-स्थूल सच्चाइयों का अनुभव होते-होते, क्योंकि समता से देखे जा रहे हैं, साक्षीभाव से देखे जा रहे हैं, तटस्थभाव से देखे जा रहे हैं माने अनुभव किये जा रहे हैं। और तटस्थभाव से अनुभव किये जा रहे हैं तो प्रज्ञा और तीक्ष्ण होती जा रही है और तीक्ष्ण होती जा रही है। हमारा मानस और तीक्ष्ण होता जा रहा है तो बींधते हुए, छेदन करते हुए, भेदन करते हुए, टुकड़े-टुकड़े करते हुए बहुत गहराइयों तक जाता है। एक ओर गहराइयों तक जा रहा है और जहां पहुँचा वहीं तटस्थ भाव से देख रहा है तो वहां कोई विकार ठहर नहीं सकता। क्योंकि तटस्थभाव से देख रहा है – बिना राग के, बिना द्वेष के, बिना मोह के जाना जा रहा है। ऐसे निर्मल चित्त में बड़ी शक्ति होती है। चित्त का वह हिस्सा जो देख रहा है, वह देखने वाला हिस्सा इतना शुद्ध है कि उसके सामने वह हिस्सा जो प्रतिक्रिया कर-करके विकार जगाये जा रहा था, विकारों का संग्रह किये जा रहा था, उसकी शक्ति कम हुए जा रही है। तो विकार दूर हुए जा रहे हैं, दूर हुए जा रहे हैं। यों जितने-जितने विकार दूर हुए जा रहे हैं, उतनी-उतनी भीतर की सच्चाई और स्पष्ट हुए जा रही है, सूक्ष्मतर सच्चाइयां और स्पष्ट हुए जा रहीं हैं। यों करते-करते विकारों की परतें उतरते-उतरते एक अवस्था ऐसी आती है जबकि स्थूल से स्थूल अवस्था से लेकर के सूक्ष्म से सूक्ष्मतम अवस्था तक का सारा शरीर-स्कंध देख लिया गया। ऐसे ही चित्त की भी स्थूल से स्थूल अवस्था से लेकर सूक्ष्मतम अवस्था तक का सारा चित्त-स्कंध देख लिया गया। चित्त ही चित्त के उस भाग का निरीक्षण करता है जो विकारों से भरा हुआ है। उसे देखते-देखते कोई घनीभूत सत्य जागा, कोई भावावेश जागा, कोई बड़ा क्रोध जागा, भय जागा, वासना जागी; घनीभूत होकर के जागी और वह देखे जा रहा है, देखे जा रहा है। उसका विघटन हो रहा है, विभाजन हो रहा है, बींधा जा रहा है। यों टुकड़े होते-होते उसका विश्लेषणात्मक अध्ययन हुए जा रहा है, विकार दूर हुए जा रहे हैं।

यों शरीर और चित्त की सच्चाई को देखते-देखते विकार दूर हो रहे हैं, और ऐसा करते-करते विकार इतने दूर हो गये, चित्त इतना निर्मल हो गया कि अब बड़ी आसानी से शरीर और चित्त के परे, इस सारे इंद्रिय क्षेत्र के परे, इंद्रियातीत अवस्था का दर्शन हो जाता है। इस सारे अनित्य क्षेत्र को, जिसके प्रति इतनी आसक्ति है, वह सारी तोड़ते-तोड़ते उस अनासक्त अवस्था पर जा पहुँचता है। अनासक्त हुआ कि नित्य का साक्षात्कार हुआ, ध्रुव का साक्षात्कार हुआ, जो अमृत है उसका साक्षात्कार हुआ। कितना कल्याण हो गया!

ये सारी बातें केवल बुद्धि के स्तर पर जान लेने से कल्याण कैसे होगा? बुद्धि से जानना इसलिए जरूरी है कि हमें प्रेरणा मिले, हमें मार्गदर्शन मिले। वस्तुतः काम तो अनुभूति पर ही करना होगा। जैसे ही अनुभूति के मार्ग पर लग जायेंगे, कदम-कदम आगे बढ़ते चले जायेंगे, तब शुद्ध धर्म के रास्ते आगे बढ़ रहे हैं। निर्मल चित्त के आचरण के रास्ते आगे बढ़ रहे हैं। ऐसा करें तो खूब मंगल होता है, खूब कल्याण होता है। धर्म के मार्ग पर, चित्त निर्मल करने के मार्ग पर जो चले, उसका मंगल ही मंगल, कल्याण ही कल्याण, स्वस्ति ही स्वस्ति, मुक्ति ही मुक्ति!

यदि आपकी या आपके किसी मित्र-परिचित की हिंदी अथवा अंग्रेजी पत्रिका सही पते पर न आती हो अथवा किसी ने शुल्क जमा किया है परंतु पत्रिका नहीं मिल रही है या नाम-पते में किसी प्रकार का सुधार करवाना चाहते हों तो कृपया नीचे दी हुई तालिका में अंग्रेजी के कैपिटल लेटर्स में खूब अच्छी तरह देख कर सभी बातें बिल्कुल साफ-साफ लिखावट में स्वयं लिख कर अथवा किसी अन्य से लिखवा कर 'विपश्यना विशोधन विन्यास' प्रकाशन विभाग, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३ को यथाशीघ्र भिजवाने की कृपा करें।

१. पूरा नाम : (पहले उपनाम, नाम)

२. पूरा पता :

३. पिनकोड : ४. टेलीफोन नं. : ५. फैक्स नं. ६. ई-मेल=

७. ग्राहक क्र. (पत्रिका पर चिपकाए पते की पहली पंक्ति) यथा KR00052 EL 196409, 100062905

८. निम्न में से जो लागू होता है, कृपया वहां –✔ निशान लगाएं/ लिखें। शुल्क विवरण – हिंदी पत्रिका – अंग्रेजी पत्रिका – दोनों

आजीवन = वार्षिक =

शुल्क जमा करने की तारीख =

पूज्य गुरुदेव की धर्मयात्रा

आगामी ११ से १५ अगस्त तक इंगलैंड और १६ से २६ अगस्त तक पश्चिम व मध्य अमेरिका के विभिन्न स्थानों व विपश्यना केंद्रों पर पूज्य गुरुदेव के धर्म-प्रवचन होंगे तथा रेडियो एवं टेलीविजन इंटरव्यू होंगे। २७ से ३१ अगस्त तक न्यूयार्क में वे यू.एन.ओ. की 'विश्वशांति समिति' की पांच दिवसीय बैठकों में भाग लेंगे और उन्हें सम्बोधित करेंगे। तत्पश्चात १ से ७ सितंबर तक मैसाचुसेट्स के 'धम्मधरा' वि. केंद्र व बोस्टन में उनके कार्यक्रम होंगे।

१८ सितंबर से ८ अक्टूबर तक वे क्रमशः हैदराबाद, बैंगलोर, चेन्नई (मद्रास) तथा नागपुर के केंद्रों पर जायेंगे और वहां केंद्रों के अतिरिक्त अन्य अनेक स्थानों पर प्रवचन व इंटरव्यू के कार्यक्रम निश्चित हुए हैं। विस्तृत विवरण अगले अंक में प्रकाशित होगा। इस बीच साधक चाहें तो उपरोक्त केंद्रों के स्थानीय संपर्क-पतों से संपर्क कर सकते हैं। (सं.)

देहरादून में सहायक आचार्य प्रशिक्षण एवं पालि शिक्षा केंद्र

पूज्य गुरुदेव की अनुमति से 'धम्मसलिल' के पास ही एक नया केंद्र खुल गया है जहां पर सहायक आचार्य, धर्मसेवक एवं ट्रस्टियों के लिए विशेष प्रशिक्षण की व्यवस्था होगी और नवीनतम उपकरणों द्वारा पालि सिखाने का निर्धारित पाठ्यक्रम होगा। आगे चल कर इस केंद्र में कई प्रकार के अनुसंधान कार्य भी संपन्न होंगे, जो कि विपश्यना विशोधन विन्यास के अनुसंधान में सहायक होंगे। विद्यापीठ का कार्य आरंभ हो गया है और आगामी अप्रेल महीने से प्रशिक्षण आरंभ होने की संभावना है।

नए उत्तर दायित्व

आचार्य

१-२) श्री सत्येंद्रनाथ एवं
श्रीमती लाज टंडन
'धम्मसलिल' देहरादून की धर्मसेवा
(श्री शेरसिंहजी के स्वास्थ्य के कारण)
'धम्मसोत' की सेवा (यथावत)
'सहायक आचार्य', 'धर्मसेवक'
एवं 'ट्रस्टियों' को प्रशिक्षण

बालशिविर शिक्षक

१. श्री दीपक हीरामन पगारे, मनमाड
२. डॉ. जयन्त शरदचंद्र शाह, नंदुरबार
३. श्री सुनीलकुमार मानसिंह,
औरंगाबाद
४. श्री विनोद वटनी, औरंगाबाद
५. श्री बाबूराव लक्ष्मण कस्तुरे, "
६. श्री विट्ठल केशव सोनवने, "
7-8. - Mrs Ruth & Mr Andrew
Gorden, New Zealand
9. Mrs Therese Bisson-Rowe, "

दोहे धर्म के

इस नश्वर संसार में, ध्रुव शाश्वत ना कोय।
पानी के से बुलबुले, भंग भंग ही होय॥
कि सकोमैं शाश्वत कहूं, नित्य अचल ध्रुव सार।
नष्ट होय ज्यों बुदबुदा, विषयों का व्यापार॥
नन्हा-सा परमाणु कण, या विशाल ब्रह्मांड।
नश्वर ही है मिट्टी कण, या मिट्टी का भांड॥
भूमंडल ग्रह उपग्रह, सूर्य चंद्र नक्षत्र।
सभी मृत्यु आधीन हैं, नश्वरता सर्वत्र॥
शीत ताप वर्षा पवन, इनका पड़े प्रभाव।
विकृत होय, विनष्ट हो, ऐसा रूप स्वभाव॥
नित्य मान इस जगत को, जो खोजे सुख भोग।
उस मूरख को सुख कहां? दुख का ही संयोग॥

मेसर्स मोतीलाल बनारसीदास
• महालक्ष्मी मंदिर लेन, ८ महालक्ष्मी चैंबर्स, २२ वार्डन रोड, मुंबई-४०००२६.
-४९२३५२६, • सनस प्लाजा, शॉप ११-१३, १३०२, सुभाष नगर, पुणे-४११००२.
-४८६१९०, • दिल्ली-२९११९८५, • पटना- ६७१४४२, • वाराणसी- ३५२३३१,
• बैंगलोर-२२१५३८९, • चेन्नई-४९८२३१५, • कलकत्ता२४३४८७४
की मंगल कामनाओंसहित

दूहा धरम रा

परिवरतनमय जगत मँह, कुछ भी तो ध्रुव नांय।
समदर री सी लहरियां, उठ उठ गिरती जांय॥
एक गिरै दूजी उठै, समदर लहर समान।
चित धारा बहती रवै, सरित प्रवाह समान॥
आंध्या उळझी बादळी, पल पल बिखरी जाय।
पाणी रा सा बुदबुदा, बण बण मिटता जाय॥
हर बसंत पतझड़ हुवै, रवै न सदा बहार।
हर जोबन जर जर हुवै, यो भंगुर संसार॥
सुख संपद अर पद मिल्यां, मत हो मद मगरूर।
अरे! देर कितनी लगै, आं नै होतां दूर॥
ईं काया रै रूप रो, बिरथा करै गरूर।
खिल्यो फूल मुरझावसी, जर जर होसी नूर॥

मेसर्स गो गो गारमेंट्स
३१ -४२, भांगवाड़ी शॉपिंग आर्केड,
१ला माला, कालबादेवी रोड, मुंबई - ४००००२.
०२२- २०५०४१४
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक: राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३, दूरभाष : (०२५५३) ८४०८६, ८४०७६.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, ६९- बी रोड, सातपुर, नाशिक-४२२००७. **बुद्धवर्ष २५४४, आषाढ़ पूर्णिमा, १६ जुलाई, २०००**

वार्षिक शुल्क रु. २०/-, विदेश में US $ 10
आजीवन शुल्क रु. २५०/-, " US $ 100

'विपश्यना' रजि. नं. १९१५६/७१.
Regn. No. AR/NSM-46/2000,

Concessional rates of Postage under
Licenced to post without Prepayment

Posting day- **Purnima of Every Month**
Posted at Igatpuri-422403, Dist. Nashik

If not deliverd please return to:-

विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - ४२२४०३
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
दूरभाष : (०२५५३) ८४०७६
फैक्स : (०२५५३) ८४१७६
Website: www.vri.dhamma.org
E-mail: <dhamma@vsnl.com>